ISSN 2320-2858 | UGC Journal No. 42684 | जून 2023

वर्ष - 11 | अंक - 127

प्रत्यक्ष दर्शी लोकस्य सर्वदर्शी भवेन्नरः

श्री श्री नरहरि सेवा संस्थान

ब्रज लोक संपदा

सौजन्य : गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी, वृन्दावन

ब्रज धूलि

~O bmH g|nXm

साहित्य, कला, संस्कृति, मानविकी एवं समाज विज्ञान की अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

संपादक :

डॉ. उमेश चन्द्र शर्मा

★

सह-संपादक :

चन्द्र प्रताप सिंह सिकरवार

★

सहयोग :

डॉ. रश्मि वर्मा

★

कला संयोजन :

ब्रज ग्राफिक्स

कार्यालय :

ब्रज लोक संपदा कार्यालय, 302, गुरुकुल रोड, वृन्दावन

मो. : 09410619265, 7017709490

Website : www.brajloksampada.com ⋆ E-mail : brajloksampada@gmail.com

स्वामी मुद्रक एवं प्रकाशक

डॉ. उमेश चन्द्र शर्मा द्वारा चौधरी प्रिंटिंग प्रेस, ब्रह्मकुण्ड, वृन्दावन, मथुरा से मुद्रित कराकर 302, गुरुकुल मार्ग, वृन्दावन (मथुरा) से प्रकाशित।

ब्रज लोक संपदा भारतीय संस्कृति के मासिक शोध-पत्र की पृष्ठभूमि में हमारा यह सद् प्रयास है कि भारत की क्षेत्रीय कला व साहित्य का प्रज्ञात कलेवर परिवेषण कर राष्ट्रीय भावात्मक एकता के सूत्र को परस्पर संस्कृति के आदान-प्रदान से पुष्ट करें; इसी से व्यक्ति का व्यक्तिवाद शिथिल होकर समन्वित भाव से लोक अस्मिता के रूप में विकासोन्मुख नव जीवन का स्वरूप ग्रहण करेगा।

आवेदन - पत्र

कृपया मैं व्रजलोक संपदा पत्रिका का एक वर्ष का सदस्य बनना चाहता/चाहती हूँ। सदस्यता शुल्क.....नकद/चैक/ड्राफ्ट नं.....
दिनांक .....संलग्न है।

श्री/श्रीमती/.....

पिता/पति का नाम.....

जहाँ पत्रिका मंगाना चाहते हो वहाँ का पूरा पता .....

.....

पिन..... दूरभाष/मो०.....

हस्ताक्षर

(कृपया उक्त आवेदन पत्र को हाथ से लिखकर या टाईप कराकर भेज सकते हैं)

सदस्यता शुल्क

एक प्रति- 100/-, एकवर्षीय - 1100/-

विशेष: अपना चैक/ड्राफ्ट: श्रीश्री नरहरि सेवा संस्थान के नाम से
302, गुरूकुल रोड, वृन्दावन, मथुरा, उ.प्र., पिन: 281121 पर भेजें।

बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक
शाखा - प्रेम मंदिर के सामने, वृन्दावन
खाता संख्या - 41957705984
आईएफसी कोड - SBIN0016533

प्रकाशित आलेखों के विचारों से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
शोध पत्रिका से सम्बन्धित सभी विवाद केवल मथुरा न्यायालय के अधीन होंगे।

डॉ. उमेश चन्द्र शर्मा

ब्रज की रज जब सायं काल गायों को खिरक में जाते समय और गगन में छा जाने से पूर्व गौ चरणों से लिपट कर किसी के भी मस्तक पर गिरती है तो इससे मुक्ति की भी मुक्ति होने की बात जन मानस कहता है, उसी पुण्यकाल को गौधूलि वेला के नाम से जानते है, अनेक शुभ कार्य इसी समय में सम्पन्न होते हैं। विशेषकर नव दम्पति की सप्तपदी का यह समय अत्यन्त मंगलमय होता है।

स्मरण रहे यह रज किंवा धूल राधा-कृष्ण के चरण कमल युगलों के संस्पर्श से गौरवान्वित है। यहाँ आने वाले भक्त वृन्द जिसमें साधु सन्त भी हैं, ब्रज की पुनीत धरणी पर आते ही कॉपीन के अतिरिक्त वस्त्रों का परित्याग कर भूमि पर षाष्टांग दण्डवत कर लोट पोट हो जाते हैं, उसी में रम जाते हैं वहीं पड़े रहते हैं। उनके पूर्व सन्तों ने भी यही किया था अत: उस नियमवद्ध परम्परा का निर्वाह अद्यतन राधाकुण्ड और वृन्दावन में विशेषकर गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय में जेष्ठ कृष्ण पक्ष की एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी आदि तीनों तिथियों में विशेष रूप से सम्पन्न होता है।

इस उत्सव में अब दर्शनार्थी भी सम्मलित होने लगे हैं, पहले मात्र साधुओं तक ही सीमित था। ब्रज की इस पावन रज की महत्ता अनन्त है; इस रज के स्पर्श से भक्ति स्वत: स्फूर्त होती है।

अन्तर्वस्तु

1.	श्रीमद्भगवद् गीता	05
2.	भगवद्गीता और चरित्र निर्माण – *के. कृष्णमूर्ति*	06
3.	रासलीला – *डॉ. उमेश चंद्र शर्मा*	14
4.	टूरिस्ट फैसीलिटेशन सेंटर (टीएफसी) जैसी सुविधाएं समूचे ब्रज में – *चन्द्र प्रताप सिंह सिकरवार*	16
5.	मल्टीलेवल पार्किंग से परिक्रमार्थियों को भारी राहत	18
6.	महिमा ब्रज धूलि की..... – *सुनील शर्मा*	20
7.	संकीर्त्तन – *डॉ. चन्द्रभान रावत*	29

श्रीमद्भगवद्गीता

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥

हे धनञ्जय! तू आसक्ति को त्यागकर तथा
सिद्धि और असिद्धि में समान बुद्धिवाला होकर
योग में स्थित हुआ कर्तव्य कर्मों को कर,
समत्व ही योग कहलाता है॥2.48॥

के. कृष्णमूर्ति

भगवद् गीता और चरित्र निर्माण

राष्ट्र और विश्व के समक्ष इस समय कई गंभीर चुनौतियाँ हैं, जैसे गरीबी और बेरोजगारी, अशिक्षा, आतंकवाद, समुदायों, समूहों और देशों के बीच हिंसक संघर्ष आदि किन्तु इन चुनौतियों के बीच जो सबसे बड़ी चुनौती है वह है मनुष्य के चरित्र की तथा पीछे बताई गयी चुनौतियों के पीछे कहीं-न-कहीं चारित्रिक असंतुलन का भी हाथ है। आप सबों ने अनुभव किया होगा कि इस समय समाज में सच्चरित्र और स्वार्थ-रहित व्यक्तियों की बहुत कमी हो गयी है।

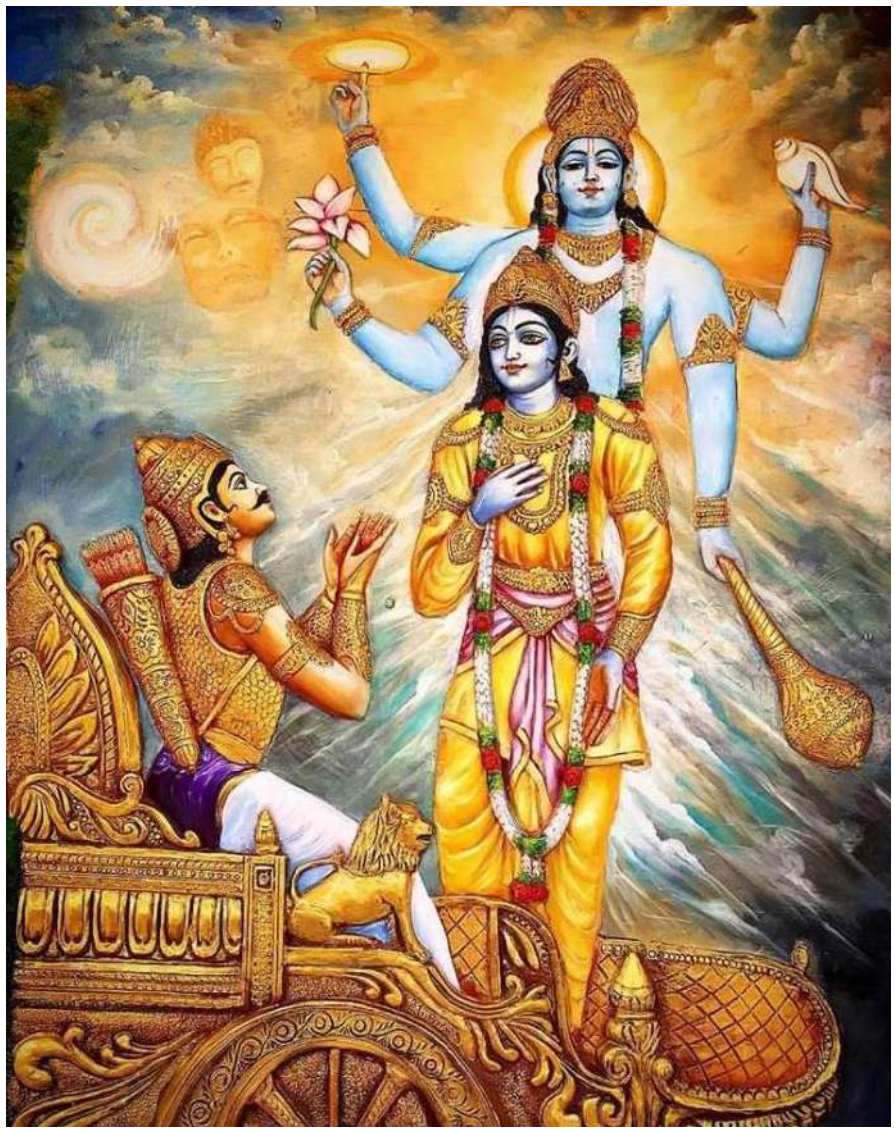

जब राजकर्मी यानि राजनितिक नेतृत्व और सरकारी अधिकारी चारित्रिक असंतुलन या विकृति से ग्रस्त हो जाते हैं तो यह सामान्य जन की पीड़ा को कई गुणा बढ़ा देता है, और इसका अत्यंत व्यापक प्रभाव एक बड़े हिस्से पर पड़ता है। दूसरी ओर, जब राजनीतिक नेतृत्व और अफसर-तंत्र का ऊपरी तबका विशेष चारित्रिक गुणों से संपन्न होता है तो उसका व्यापक लाभ दुनिया, देश और समाज को मिलता है। अब्राहम लिंकन के न्यायप्रिय और दृढ़

चरित्र ने अमेरिका को घृणित और व्यापक दास-प्रथा से मुक्त कर दिया। उनके चरित्र की दृढ़ता देखिये कि दास प्रथा खतम करने के उनके निर्णय ने अमेरिका को दो फाड़ कर दिया और एक ऐसे गृह युद्ध को जन्म दिया जो बिरले ही देखा जाता है। दोनों ओर से तोप और बंदूके चलती रहीं। राम के चरित्र ने जनता को रामराज्य-जैसा अद्‌भुत शासन प्रदान किया। ली क्वान यू के चारित्रिक गुणों ने सिंगापोर देश की तस्वीर बदल डाली, सरदारपटेल की चारित्रिक दृढ़ता और निर्भीकता ने आजादी के बाद भारत के कई टुकड़ों को एकीकृत करने में अपनी अद्‌भुत भूमिका निभाई। एक स्थापित ईमानदार और दृढ चरित्र का कलक्टर और एस.पी. जब जिले में आते हैं तो आने के साथ ही पूरा तंत्र तत्काल सक्रिय हो जाता है। यह सब अंतत: चारित्रिक गुणों का ही प्रभाव होता है।

जब हम चरित्र की बात करते हैं तो चरित्र से हमारा क्या मतलब होता है, यह समझना जरूरी है। बहुत से लोग चरित्र का संबंध व्यक्ति के यौन आचरण से जोड़ते हैं जो चरित्र का एक पहलू है। चरित्र की उससे कहीं व्यापक अवधारणा है। वास्तव में चरित्र का अर्थ होता है व्यक्ति के अंदर जो भावनाएं हैं, जो विचार, जो जीवन-मूल्य हैं, उनका समुच्चय और उनके आधार पर व्यक्ति का जो आचरण होता है, वह ये भावनाएं और ये जीवन-मूल्य तथा यह विचार मिलजुल कर जो स्थाई संस्कार बनाते हैं, वह हमारे चरित्र का अंदरूनी हिस्सा होता है। ऐसी भावनाएं ऐसे विचार ऐसे जीवन मूल्य जिन्हें हम कुछ समय के लिए ग्रहण करें और हमारे से वे कुछ समय में ही स्खलित होकर हट जाएं, वह हमारे चरित्र का मुख्य भाग नहीं होते। जैसे जो व्यक्ति बात-बात में क्रोध करे, नित्य क्रोध करे, उसके विषय में हम कह सकते हैं कि वह एक क्रोधी चरित्र का है। लेकिन जो व्यक्ति शांत रहता है, शालीन रहता है और कभी आवश्यकता पड़ने पर ही क्रोध करता है उसे हम क्रोधी चरित्र का व्यक्ति नहीं कह सकते। इसी प्रकार कभी किसी संत का प्रवचन सुन लेने के बाद किसी व्यक्ति ने हजार रुपए का दान कर दिया और फिर से उसी कंजूसी की हालत में आ गया तो उसे परोपकारी चरित्र नहीं कहेंगे। क्योंकि परोपकार उसके मन में एक संचारी भाव की तरह उदित हुआ और विलुप्त हो गया स्थाई भाव के रूप में परिवर्तित नहीं हो सका।

अब यह प्रश्न है कि वह कौन सी भावनाएं हैं, कौन से विचार हैं, कौन से जीवन-मूल्य हैं, कौन से आचरण होते हैं, जो अधिक बेहतर चरित्र का हिस्सा होते हैं। ध्यान रहे कि यह समय और काल के सापेक्ष भी होता है। हर स्थान, यह काल में एक ही प्रकार का आचरण या एक ही प्रकार का जीवन-मूल्य सच्चरित्र का प्रमाण हो, ऐसा नहीं है। किंतु कुछ शाश्वत जीवन मूल्य हैं, सद्भाव हैं, शाश्वत विचार हैं,जो सभी कालों में और सभी स्थानों में कमोबेश एक अच्छे चरित्र का आधार माने जाते हैं। हम ऐसे कुछ गुणों और भावों के बारे में जानते हैं। उसके बाद हम भारतीय समाज के लोगों का जो आज का चरित्र है, उसकी कुछ कमियों की समीक्षा करेंगे और यह देखेंगे कि भगवद्गीता में इन कमियों को दूर करने के लिए क्या दवाइयां हैं, क्या मार्गदर्शन है।

ऐसे गुण और भावों को देखना हो तो हमें भगवद् गीता में दो विशेष स्थानों पर जाना चाहिए। एक तो 12 वां अध्याय श्लोक 13 से 20 तक, जिसमें ईश्वर ने उन गुणों की चर्चा की है, उन भावों की चर्चा की है, उन जीवन-मूल्यों की चर्चा की है जो व्यक्ति को ईश्वर का प्रिय बनाते हैं। लेकिन आप सभी सहमत होंगे कि उन

चरित्रों में भी ये गुण और भाव होने चाहिए जो ईश्वर में विश्वास नहीं करते हो, और जिनमें ईश्वर का प्रिय बनने की लालसा नहीं हो।

भगवद् गीता की एक बहुत बड़ी विशेषता है डरा धमका कर आपसे कुछ कराने, आपको बदलने की, आपका चरित्र बदलने की कोशिश नहीं करती। आप देखेंगे कुरान शरीफ में 600 बार नरक का भय दिखाया गया है कुछ करने के लिए और कुछ न करने के लिए। बाइबिल में 262 बार किसी न किसी नाम से नरक का जिक्र आया है और उसे डराया गया है कि यह करोगे तो नर्क में जाओगे और यह न करोगे तो नर्क में जाओगे। स्वयं ईशा ने 72 बार नरक का नाम अलग-अलग नामों से लिया है और अपने अनुयायियों में भय पैदा किया है कि अगर यह काम नहीं करोगे तो नरक की आग में जलाए जाओगे। लेकिन भगवद् गीता में नरक शब्द का प्रयोग सिर्फ चार बार हुआ है दो बार अर्जुन के मुख से और दो बार भगवान श्रीकृष्ण के मुख से, और 16 वें अध्याय में दो बार और नरक शब्द का प्रयोग तो नहीं हुआ है, लेकिन संकेत नरक की ओर ही है। इसलिए हम यह मान लें कि भगवद् गीता में वस्तुतः चार बार भगवान के मुख से नरक या समकक्ष स्थिति का जिक्र किया गया है और भय दिखाया गया है। लेकिन बहुत थोड़ा सा भगवद्गीता में सर्वत्र प्रेरणा देकर, कारण बता कर अच्छे कर्म करने को प्रेरित किया गया है।

अब याद करें एक महान दार्शनिक ने कहा था कि जो कर्म किसी से सिर्फ भय दिखाकरकराया जाए उसका नैतिक-मूल्य बहुत कम हो जाता है और जो कर्म अपनी प्रेरणा से किया जाता है उसका नैतिक-मूल्य बहुत होता है। मान लीजिए कि आप से कुंभ में किसी बाबा जी ने कहा कि तुम्हारे ऊपर शनि का बड़ा गहरा प्रकोप है। अगर कुछ दान दक्षिणा करोगे तो यह प्रकोप कम हो जाएगा। यह सुनकर एक व्यापारी बंधु ने बाबा जी को भी 50000 रुपये चढ़ाए और बाहर जाकर गरीबों में भी 50000 रुपये बांटे। आप समझ सकते हैं कि इस परोपकार या दान का नैतिक गुण या नैतिक-मूल्य बहुत ऊंचा नहीं हुआ क्योंकि यह परोपकार भय के कारण किया गया। अगर यही परोपकार वे सज्जन स्वेच्छा से अंतः प्रेरणा से करते तब यह अधिक नैतिक रूप से मूल्यवान कार्य होता। भगवद् गीता की एक बहुत बड़ी विशेषता है कि वह आपको भय दिला कर परिवर्तित नहीं करना चाहती, यद्यपि थोड़ा भय तो एक साधारण व्यक्ति के हमेशा मन में रहना चाहिए। लेकिन भगवान श्रीकृष्ण आपसे तर्क-वितर्क करके आप को समझा-बुझाकर आप को मनाने की कोशिश करते हैं कि यह बेहतर चरित्र है, ऐसा बनो और यह बेहतर चरित्र नहीं है, ऐसा मत बनों, यह दैवी गुण है इसको ग्रहण करो यह आसुरी गुण है इसको त्याग दो। इसलिए भगवद् गीता पढ़ने वाले जो लोग हैं और जो भगवद् गीता के आदर्शों को जीवन में ग्रहण कर स्वेच्छा से अंतर्मन से बेहतर कार्य करते हैं। उनका मूल्य न केवल ईश्वर की निगाहों में बहुत ऊपर है बल्कि जो नास्तिक मानवतावादी हैं वह भी उनकी अधिक प्रशंसा करेंगे कि यह अधिक बेहतर व्यक्ति है जो बिना भय या लोभ के अच्छे कार्य करता है। जो वेद हैं वह आपको नर्क का भय कम दिखाते हैं, लेकिन स्वर्ग का लोभ जरूर दिखाते हैं।

स्वर्ग का लोभ इसलिए कहा जाता है क्योंकि वहां वे सारे देवभोग उपलब्ध हैं जो पृथ्वी पर भी नहीं मिल पाते। मुक्ति को 'लोभ' नहीं माना जाता क्योंकि निर्वाण मिलने पर, मुक्ति मिलने पर, इंद्रिय भोग तो दूर-दूर तक नजर नहीं आते। बल्कि उनके प्रति आसक्ति छूटने पर ही निर्माण मिलता है, मुक्ति मिलती है।

आपका चरित्र कैसा होना चाहिए पूरी भगवद्गीता इसकी व्याख्या करती है, लेकिन 16वें अध्याय में भगवान ने जो बातें कहीं हैं दैवी संपदा या दैवी गुणों के बारे में और आसुरी संपदा या आसुरी चरित्र के बारे में, उस पर विशेष ध्यान देना चाहिए। संक्षेप में कहा जाए तो आप दैवी चरित्र बनें, भगवान ऐसा चाहते हैं, और भगवान यह नहीं चाहते कि आप एक आसुरी चरित्र बनें। दैवी चरित्र के लक्षण क्या-क्या होते हैं? भगवान ने इस अध्याय में 27 ऐसे लक्षण बताएं हैं जो मनुष्य को एक दैवी चरित्र प्रदान करते हैं। इनमें से कुछ लक्षण निम्नलिखित हैं। ये ऐसे लोगों पर भी लागू होंगे जो ईश्वर में विश्वास नहीं करते होंगे, मृत्यु के बाद के जीवन में भी विश्वास नहीं करते होंगे, लेकिन जो मानवीयता में विश्वास करते होंगे।

निर्भीकता, अंत:करण की शुद्धि, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शांति यानी खुद शांत मन से रहना और दूसरों को भी अशांत नहीं करना, तप करना, स्वभाव की सरलता, किसी की निंदा या शिकायत में रुचि नहीं लेना, सभी जीवों के प्रति दया भाव, स्वभाव और वाणी की मधुरता, बुरे काम करने में नहीं लगना, चंचल चित्त का नहीं होना, क्षमा, धैर्य, बाहर भीतर की शुद्धि और स्वच्छता, अद्रोह यानी किसी से विश्वासघात नहीं करना, अधिक मान की अभिलाषा नहीं करना, अध्यात्म विज्ञान में नित्य स्थिर रहना आदि।

ध्यान रहे की भगवान ने जो सूची दी है वह भी उदाहरण के लिए है, पूर्ण नहीं है। भगवान ने 12वें अध्याय में जिन 43 गुणों और भावों की चर्चा की है, जो व्यक्ति को ईश्वर का प्रिय बनाते हैं, वे भी दैवी गुण ही हैं जिनमें से कई का जिक्र 16 वें अध्याय में भी हुआ है। लेकिन कुछ छूट गए हैं। उन्हें भी देखना चाहिए जैसे- अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्र: करुण एव च। निर्ममो निरहङ्कार: समदु:खसुख: क्षमी... आदि।

इसी प्रकार भगवान ने विशेष रूप से आध्यात्मिक चरित्रों की बात की है जिनमें न केवल ये दैवी गुण होने चाहिए और वे 12वें अध्याय वाले ईश्वर को प्रिय बनाने वाले गुण होने चाहिए, बल्कि 14वें अध्याय में गुणातीत के जो लक्षण बताए हुए हैं, उनसे भी संपन्न होना चाहिए और जो दूसरे अध्याय में स्थितप्रज्ञ के लक्षण बताएं हैं, उनसे भी युक्त होना चाहिए। लेकिन ये आध्यात्मिक रूप से विशेष उन्नत चरित्रों के लक्षण हैं जो मोक्ष के द्वार तक पहुंच चुके हैं।

अगर आप ऊपर की सूची की परीक्षा करेंगे तो पाएंगे कि इसमें से दो-तीन ही ऐसे हैं, जो जिनमें नास्तिकों की रूचि नहीं होगी। शेष सभी एक अच्छे चरित्र वाले इंसान के लक्षण हैं, चाहे वह ईश्वर में विश्वास करता हो या नहीं, आस्तिक हो या नास्तिक हो।

भगवान कहते हैं कि यह दैवी चरित्र स्वर्ग और उससे भी ऊपर मुक्ति के दरवाजे खोलने वाले हैं, और आसुरी गुण, जिनसे आसुरी चरित्र का निर्माण होता है, कीट पतंग की योनियों और नरक में ले जाने वाले होते हैं।

वे आसुरी गुण क्या हैं जिनसे एक आसुरी चरित्र का निर्माण होता है ? ये हैं–

दंभ, दर्प और अभिमान, जो सभी अहंकार के ही विभिन्न रूप हैं, क्रोधी प्रवृत्ति, स्वभाव की कठोरता, अज्ञान तथा किधर जाएं और किधर न जाएं, यानी कर्तव्य और अकर्तव्य में भेद नहीं कर पाना, मन और शरीर की स्वच्छता का अभाव, अच्छे आचरण का अभाव, असत्य बोलने की प्रवृत्ति, भोगवादी विश्व दृष्टि, क्रूर कर्म करना, सबों का अहित कर जगत को क्षति पहुंचाते रहना, कभी न पूरी होने वाली कामनाओं में लगातार लगे रहकर पूर्ण कामनाओं की पूर्ति के लिए आचरण करना, भोग विलास के लिए अन्याय पूर्वक धन कमाना, आदि आदि।

ध्यान रहे कि ऐसा कोई भी व्यक्ति शायद ही आपको मिले जिसमें सिर्फ आसुरी गुण हों या सिर्फ दैवी गुण हों। वास्तव में, व्यवहार में ऐसे ही लोग मिलते हैं, जिनमें थोड़े आसुरी गुण और थोड़े दैवी गुण होते हैं। किसी में दैवी गुण बहुत ज्यादा और आसुरी गुण बहुत कम होते हैं, किसी में आसुरी गुण बहुत ज्यादा और दैवी गुण कम होते हैं। लेकिन भगवान ने भगवद् गीता में दो बातें जो कहीं हैं वह बहुत ढाडस दिलाती हैं कि व्यक्ति में इच्छा और कर्म के चुनाव की स्वतंत्रता है, फ्रीडम ऑफ विल है, वह चाहे तो सभी आसुरी गुणों को त्याग सकता है और चाहे तो देवी गुणों को ग्रहण कर सकता है–

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते॥

(श्रीमद्भगवद् गीता 5:14)

और दूसरी बात कही है सत्व संशुद्धि की। सत्व का अर्थ होता है आंतरिक चरित्र। इस चरित्र का शुद्धिकरण भी संभव है, यह उन्होंने बताया है। महर्षि वाल्मीकि भी कभी आसुरी चरित्र थे, यानी उनमें आसुरी गुण अधिक थे और दैवी गुण बहुत कम। लेकिन उन्होंने अपने आपको बदला और ऐसा बदला कि वह एकदम से महर्षि हो गए– महर्षि वाल्मीकि ! अपने आसुरी गुण त्याग दिए। हम भी ऐसा कर सकते हैं जो थोड़े बहुत आसुरी लक्षण हममें हों, हम उन्हें सोलहवें और बारहवें अध्याय में दी गई सूची को देखकर पहचाने और उन्हें धीरे–धीरे त्यागने की कोशिश करें। क्रोधी हैं, तो क्रोध छोड़ने की कोशिश करें; बहुत ज्यादा इंद्रिय भोग में रहते हैं तो थोड़ा इंद्रियों पर नियंत्रण करना सीखें; हममें करुणा नहीं है तो हम करुणा को जागृत करें; परोपकारी नहीं हैं तो परोपकार भावना को जागृत करें, यह सब संभव है। अर्थात आसुरी से दैवी चरित्र की ओर बढें।

आप सारे वेद और उपनिषद पढ़ जाएं उनमें आपको कहीं भी इस प्रकार से एकत्र दैवी गुणों और आसुरी गुणों का भेद नहीं मिलेगा और एकत्र उन गुणों और भावों की, जीवन मूल्यों की, सूची नहीं मिलेगी जो आपके चरित्र का निर्माण करने में आपको एक मानसिक स्पष्टता तुरंत प्रदान कर सकें। ये गुण और भाव आपको वेदों और उपनिषदों में कहीं–कहीं बिखरे हुए मिल जाएंगे, एकत्र नहीं।

एक दूसरा पहलू जो भगवद् गीता में सामने आया है वह बहुत ही महत्वपूर्ण है, और वह है सात्विक, राजसिक और तामसिक भेद। तामसिक भावों को आसुरी चरित्र का लक्षण मान सकते हैं; सात्त्विक भावों को

एक दैवी चरित्र का लक्षण मान सकते हैं। जो रजोगुणी भाव में हैं वे मिश्रित स्थिति में कहलाएंगे; प्रकृति के इन तीनों गुणों को- सतोगुण, रजोगुण एवं तमोगुण की व्याख्या और विवृत्ति को- 14 वें, 17 वें और 18 वें अध्याय में आप प्राप्त कर सकते हैं। ऊँहें एक बार जरूर देखें।

भ्रष्टाचार, कालाबाजारी, अन्यायपूर्वक धन कमाना आदि जैसे गंभीर आसुरी-चरित्र को ठीक करने के लिए गीता जी में स्पष्ट रूप से मार्गदर्शन किए गए संदेशों को अगर बच्चों को बचपन से ही याद करा दिए जाएं तो, चरित्र-निर्माण में उन्हें एक मजबूत विचार मिलेगा। भगवद्गीता में इस विषय में भ्रष्टाचार, कालाबाजारी, अन्यायपूर्वक धन कमाना को लेकर दो श्लोक में स्पष्ट निर्देश इस प्रकार हैं।

आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः।
ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसञ्चयान्॥

(श्रीमद्भगवद् गीता 16.12)

आशा की सैकड़ों रस्सियों से बंधे हुए ये मनुष्य काम-क्रोध में सदा स्थित रहकर विषय-भोगों के लिए अन्याय-पूर्वक धन1 कमाने और संग्रह करने की इच्छा करते हैं।

तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान्।
क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु॥

(श्रीमद्भगवद् गीता 16.19)

भगवद् गीता स्पष्ट रूप से एक समतावादी ग्रंथ है। सफलता और असफलता में समदृष्टि, मान और अपमान में समदृष्टि, गर्मी और सर्दी में समदृष्टि, ब्राह्मण और शुद्र में समदृष्टि, गाय और कुत्ते में समदृष्टि। अब आप जानते हैं कि हिंदू गाय और कुत्ते में समदृष्टि नहीं रख सकता। गाय की पूजा करेगा; पूजा नहीं करेगा तो कम से कम उसकी प्रताड़ना नहीं करेगा। लेकिन कुत्ते को पत्थर जरूर मारेगा। बाबाजी लोग भाषण भी देंगे कि कुत्ते ने अगर भोजन देख लिया आपका तो भोजन खराब हो गया। कुत्ते ने काट लिया तो क्या कहना है, अनर्थ हो जाएगा। लेकिन भगवान कहते हैं कि कुत्ते और गाय को समभाव से देखो; ब्राह्मण और शूद्र को समभाव से देखो।

विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः॥

(श्रीमद्भगवद् गीता 5.18)

अगर यह श्लोक बच्चों को बचपन से ही याद करा दिए जाएं तो उन्हें एक विचार मिलेगा। इसके बाद वे सोचेंगे और निर्णय करेंगे कि क्या जो इस श्लोक में कहा है वह अच्छा है कि नहीं है। तब स्वतः इस दृष्टि से मुक्त होने में उनको आसानी होगी।

उनमें एक्सीलेंस की कमी रहती है। अफसर ऑफिस नहीं जाते या ऑफिस में उचित समय नहीं गुजारते। फाइलें घुमाते रहते हैं, निर्णय पर नहीं पहुंचना चाहते। कई कार्यालयों में तो ज्यादा समय अधिकारी चाय पीने में लगाते हैं। शिक्षक स्कूलों में नहीं जाते, जाते हैं तो पढ़ाते नहीं,पढ़ाने में उनका मन नहीं लगता। थोड़े से शिक्षक हैं

जिनके भरोसे व्यवस्था चल रही है, कुछ बच्चें खड़े हो रहे हैं। डॉक्टर हैं, वह अस्पताल के फायदे के लिए तमाम तरह के टेस्ट अनावश्यक लिख देते हैं। कभी-कभी बिना जरूरत ऑपरेशन भी कर देते हैं। यह भी कार्य-संस्कृति के विरुद्ध हुआ। जो काम करो; उसके प्रति न्याय करो, गलत काम ना करो, गलत तरीके से काम नहीं करो। भगवद्गीता में इस विषय में कार्य-संस्कृति को लेकर कम से कम चार स्पष्ट निर्देश इस प्रकार हैं।

अनपेक्षःशुचिर्दक्षउदासीनोगतव्यथः।
सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः॥

(श्रीमद्भगवद् गीता 12.16)

अर्थात्, जो मनुष्य अपेक्षा (expectation) या आकांक्षा (desire) से रहित है, शुद्ध या पवित्र है, दक्ष और पक्षपात से भी रहित तथा दु:खों से छूटा हुआ है, वह सर्वारंभ-परित्यागी2 भक्त मुझको प्रिय है!

मुक्तसङ्गोऽनहंवादीधृत्युत्साहसमन्वितः।
सिद्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारःकर्ता सात्त्विक उच्यते॥

(श्रीमद्भगवद् गीता 8.26)

अर्थात् जो कर्ता अर्थात कर्म करने वाला व्यक्ति आसक्ति की भावना से मुक्त, अहंकार से रहित, धीरज और उत्साह से भरा हुआ, तथा काम के सफल होने और न होने में निर्विकार अर्थात खुशी और गम आदि से मुक्त रहता है, वह सात्विक कर्ता कहा जाता है। यह उत्साह पूर्वक अपने कार्यों को सम्पादित करने का निर्देश है।

स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।
स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दति तच्छृणु॥

(श्रीमद्भगवद् गीता 18.45)

अर्थात् अपने-अपने कर्मों में तत्परता से लगा हुआ मनुष्य सफलता को प्राप्त करता है। अपने कर्म में लगा हुआ मनुष्य जिस प्रकार से कर्म करके सिद्धि को प्राप्त करता है उसे सुनो। यह अकर्मण्यता के विरुद्ध संदेश हैं। अपने-अपने प्रदात कर्म को अच्छी तरह सम्पादित करने का संदेश है।

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धि विन्दति मानवः॥

(श्रीमद्भगवद् गीता 18.46)

अर्थात् जिस परमेश्वर से सारे प्राणियों की उत्पत्ति हुई है, और जिससे यह समस्त जगत व्याप्त है, उस परमेश्वर की अपने स्वाभाविक कर्मों द्वारा पूजा करके मनुष्य सिद्धि को प्राप्त हो जाता है। इसमें "कार्य ही पूजा है" या "Work is worship" का संदेश है। यानी अपने कार्य को अधिकारी, नेता, डॉक्टर, शिक्षक सभी पूजा समझ कर अच्छी तरह मन लगा कर करें।

इसी प्रकार भगवद्गीता उन सभी दुर्गुणों का निवारण करने के लिए अच्छा चरित्र विकसित करने के लिए उचित मार्गदर्शन करती है।

संदर्भ सूची :

टिप्पणी : 1– यहां अधिकारियों द्वारा भष्टाचार और व्यवसाइयों द्वारा गलत तरीकों से पैसे कमाने की ओर विशेष संकेत है। इस प्रकार अन्यायपूर्ण तरीके से धन कमाने का क्या परिणाम होता है, यह इस अध्याय में बताया गया है (मोक्ष में बाधा, स्वर्ग प्राप्ति में बाधा, नीच योनियों अर्थात कीट–पतंग, पशु–पक्षी में पुनर्जन्म, नरक–गमन आदि)।

टिप्पणी : 2– 'समारंभ', 'आरंभ' आदि का प्रयोग भगवद्–गीता में फल की इच्छा से युक्त कार्य के अर्थ में हुआ है।

★★★

रासलीला

डॉ. उमेश चंद्र शर्मा

ब्रज कला क्षेत्र में अनुपम स्थान रखता है। भगवान श्रीकृष्ण की क्रीड़ा स्थली होने के कारण विभिन्न कलायें उनके साथ ही जन्म लेती रहीं, जिसे आज हम रासलीला के नाम से जानते हैं, वह नृत्य रूप में उनके जन्म से पहले व्रजवासियों में प्रचलित थी। यह बहुत ही महत्त्व पूर्णलीला उस समय प्रस्तुत हुई जब शरद पूर्णिमा की रात्रि में ब्रजवालाओं के साथ स्वयं श्री कृष्ण उस रास में सम्मिलित हुये। संस्कृत में इसे रासक कहते हैं। भरत मुनि ने रासक के तीन भेद किये है।

1. मण्डला कार रासक
2. दण्डरासक
3. ताल रासक

इन तीनों का ही समन्वय रासलीला में देखा जाता है। व्रजवालायें जिस नृत्य को करती थी तब इसे हल्लीसक नाम से जाना जाता था।

ब्रज में श्रीकृष्ण के पश्चात् यहाँ पधारे आचार्यों ने अपनी आध्यात्मिक साधनाओं के द्वारा पुनः प्रतिष्ठित किया और रंगमंच का रूप प्रदान किया, रासलीला जहाँ होती है उसे मंडल कहते है, ब्रज में तैतीस मंडल हैं, ये मंडल आचार्यों ने स्थापित कराये थे। इसके लिये साहित्य संगीत और नृत्य की व्यवस्था दी गई। जिसमें प्रमुख रचनाकार श्री स्वामी हरिदासजी, हित हरिवंश जी, हरिराम व्यास जी, ध्रुवदास जी, व्रजवासी दास जी अष्टछाप के कवि के अतिरिक्त अन्य अनेक कवियों की श्रृंखला है, जिनका साहित्य उपलब्ध है, संगीत की दृष्टि से ध्रुपद धमार स्वामी हरिदास जी की देने है, अन्य संगीत समय-समय पर ग्रहण होता रहा। पूर्व में तीन वाद्य यन्त्र इसमें प्रयुक्त होते थे जिसमें सौरंगी, वीणा और मृदंग तथा बंसुरी, संगीतकारों को समाजी कहा जाता है। कलाकारों के समूह को रास मंडली कहते हैं, निदेशक को स्वामी जी कहते हैं। रासलीला के दो भाग होते हैं, एक नित्यरास द्वितीय रासलीला, नित्य रास प्रत्येक रास में होना अनिवार्य होता है। लीला स्वामी जी की इच्छानुसार या भक्तों की भावना पर निर्भर होती है। वे सभी लीलायें जो ब्रज में हुई उन सभी श्रीकृष्ण लीलाओं का मंचन होता है।

रासलीला के अन्तर्गत अन्य कलाओं में साज सज्जा और रूप सज्जा विषयक कलाएँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन कलाओं का विशेषज्ञ समाजियों में जो व्यक्ति होता है। उसे श्रृंगारी कहते हैं। उसका कार्य स्वरूपों और अन्य अभिनेता पात्रों को वस्त्राभूषण आदि से सुसज्जित करना है और उनके मुखों की भूमिका के अनुरूप चित्रित करता है।

रूप सज्जा बहुत महत्त्वपूर्ण अंग है, रासलीला के पात्रों को स्वरूप कहते हैं, इन स्वरूपों का मुख-चित्रण होता है। इनके मुखों को चन्दन से चित्रित किया जाता है, इनके कपोलों पर मयूर, शुक (तोता) अष्ट दल कमल,

बेल बूटे बनाये जाते हैं। इनकी नासिका और चिबुक (ठोड़ी) भी चित्रित की जाती है, मनसुखा जो हास्य कलाकार का ही रूप होता है अत: इसका चित्रण देखते ही हंसी आने लगती है।

ब्रज में रासलीला की दोनों पद्धतियाँ अलग-अलग समय, ऋतु और स्थल के अनुसार विद्यमान है जिसमें प्राचीन स्वरूप और वर्तमान स्वरूप मिलता है। लेकिन अब यह तीव्र गति के परिवर्तन के कारण विद्युत यांत्रिकी युग में यह विधा भी दिनोंदिन घटती चली जा रही है। अतएव समय रहते इसको सतत बनाये रखने के प्रयासों के अतिरिक्त हम डाक्यूमेंटेशन करना आवश्यक समझते हैं। इसकी शब्दावली काव्य, संगीत, नृत्य सभी पक्ष बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। श्रृंगार आदि के साथ अन्य सामग्री संकलन भी आवश्यक होगा।

रास लौकिक दृष्टि से प्राचीन ब्रज मंडल के गोप समाज का एक नृत्त किंवा लोक नृत्त था, जिसका प्रादुर्भाव प्रागैतिहासिक काल में हुआ था। उसे द्वापर युग में श्रीकृष्ण ने गोप बालाओं के साथ सम्पन्न कर गौरवशाली बनाया था। कालांतर में उस पुरातन नृत्य को सुव्यस्थित नृत्य का रूप प्राप्त हुआ।

ब्रज की यह सर्वोपरि विधा कही जा सकती है। इसमें गायन-वादन-नृत्य के साथ कथानक का भी समायोजन रहता है। अतएव रासलीला को लोक नाट्य कहा गया है।

★★★

टूरिस्ट फैसीलिटेशन सेंटर (टीएफसी) जैसी सुविधाएं समूचे ब्रज में

-चन्द्र प्रताप सिंह सिकरवार

- उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद तैयार करा रहा आधा दर्जन से ज्यादा पर्यटक सुविधा केंद्र
- उ.प्र. पर्यटन निगम के जर्जर पर्यटक गृहों का होगा कायाकल्प, कनवेंशन सेंटर का भी निर्माण

वृंदावन के पर्यटक सुविधा केंद्र (टीएफसी) पर तीर्थयात्रियों को बहुत की किफायती दर पर ठहरने व भोजन आदि की अच्छी सुविधाएं उपलब्ध कराए जाने के जो शानदार परिणाम सामने आए हैं, उन्हें देखते हुए उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद ने ब्रज के सभी तीर्थ स्थलों पर पर्यटक सुविधा केंद्र बनाए जाने का निर्णय लिया है। बरसाना समेत कुछ जगहों पर ये केंद्र बन चुके हैं।

उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद अब पर्यटन निगम के जर्जर पड़े पर्यटक गृहों को अपने अधीन लेकर उन्हें नए सिरे से बनवाएगा। इस आशय का प्रस्ताव परिषद की बोर्ड बैठक में लाया गया।

परिषद अब पर्यटक सुविधा केन्द्रों की सुविधा बरसाना, नंदगांव, गोवर्धन, राधाकुंड व बलदेव में देना चाहती है। बरसाना में गोवर्धन ड्रेन के किनारे एक पर्यटक सुविधा केन्द्र तैयार हो चुका है। अन्य स्थलों पर निर्माण प्रक्रिया जारी है।

बरसाना में राधा बिहारी इंटर कालेज की जमीन पर भी ये केंद्र बनाया जाएगा। यहीं पर रंगोत्सव का आयोजन भी हर साल होता है। नंदगांव में नंदबाबा मंदिर के समीप पर्यटक सुविधा केन्द्र से तीर्थयात्री सुविधा उठाएंगे। गोवर्धन में दो व राधाकुंड में एक पर्यटक जनसुविधा केन्द्र बनने हैं। इसके लिए जगह चिन्हित कर ली गयी है। जैंत व फरह के समीप जोधपुर झाल पर छोटे पर्यटक सुविधा केंद्र (टीएफसी) का निर्माण कराया जाएगा।

वृंदावन में पवन हंस के हेलिपैड के समीप 1500 लोगों की क्षमता का कनवेंशन सेंटर का निर्माण कराया जाएगा। साथ ही इसी स्थान पर 300 लोगों के रहने के लिए गेस्ट हाउस भी बनाया जाना है। इनकी स्वीकृति राज्य सरकार ने प्रदान कर दी है।

वृंदावन का टीएफसी तीर्थयात्रियों के लिए वरदान

मथुरा, वृंदावन, गोवर्धन और बरसाना में महंगे रेस्टोरेंट और होटल उपलब्ध हैं। इन स्थलों पर बसों से आने वाले मध्यम व गरीब वर्ग के पर्यटकों के लिए सस्ती सुविधाएं नहीं हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए उत्तर प्रदेश ब्रज तीर्थ विकास परिषद ने वृंदावन में पर्यटक सुविधा केन्द्र का निर्माण कराया था। आज यह सुविधा केन्द्र गरीब व मध्यम वर्ग के तीर्थयात्रियों के लिए बहुत लाभकारी सिद्ध हो रहा है। यहां पर बसों से ग्रुपों में आने वाले यात्रियों को रहने, अपनी स्वयं की रसोई सुविधा तो मिल रही है। ये बहुत किफायती दामों पर उपलब्ध है।

मल्टीलेवल पार्किंग से परिक्रमार्थियों को भारी राहत

– भारत सरकार की प्रासाद योजना में गोवर्धन में 15.82 करोड़ रुपये की लागत से बना है मल्टीलेवल पार्किंग

– उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद ने मानसी गंगा, चंद्र सरोवर, परिक्रमा मार्ग और कुसुम सरोवर को चमकाया

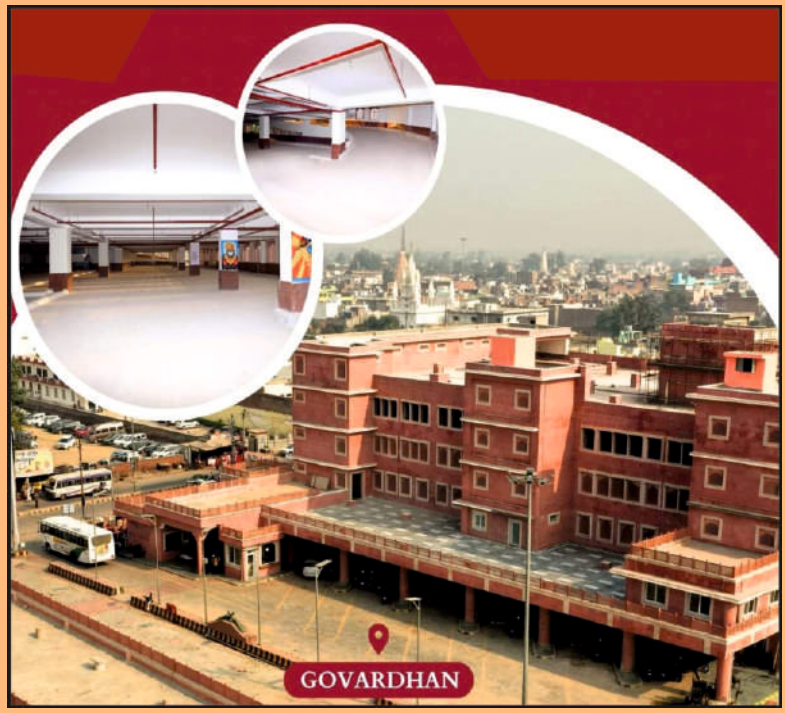

उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद की पहल पर भारत सरकार की प्रासाद योजना के तहत गोवर्धन में 15.82 करोड़ रुपये की लागत से बनवाए गए 'मल्टीलेवल कार पार्किंग' से परिक्रमार्थियों को भारी राहत मिल रही है। इस मल्टीलेवल पार्किंग को तैयार कराने में परिषद् के उपाध्यक्ष श्री शैलजाकांत मिश्रजी एवं सीईओ श्रीनगेंद्र प्रताप जी ने अत्यधिक रूचि ली, जिससे गोवर्धन में परिक्रमार्थियों के बढ़ते वाहनों को पार्किंग संभव हो पा रही है।

भारत सरकार की इस योजना में गोवर्धन व मथुरा के विकास के लिए केंद्रीय पर्यटन मंत्रालय ने 39.73 करोड़ रुपये 07 जनवरी 2019 को केंद्रीय पर्यटन मंत्री, किशन रेड्डी ने मंजूर किए थे। इसके तहत 15.82 करोड़ रुपये की लागत से 'मल्टीलेवल पार्किंग ब्लॉक, क्लॉक रूम, शौचालय, बाउंड्री वॉल और गोवर्धन बस स्टैंड पर फर्श को तैयार किया गया। परियोजना के तहत स्वीकृत अन्य घटकों में मानसी गंगा, चंद्र सरोवर, गोवर्धन परिक्रमा का विकास और कुसुम सरोवर का विकास भी शामिल है।

उल्लेखनीय है कि "तीर्थयात्रा कायाकल्प और आध्यात्मिक विरासत संबंर्धन अभियान" का राष्ट्रीय मिशन (प्रासाद स्कीम) केंद्र सरकार द्वारा वित्तीय रूप से पोषित एक केंद्रीय क्षेत्र की योजना है। पर्यटन मंत्रालय द्वारा प्रधानमंत्री के नेतृत्व में वर्ष 2014-15 में यह योजना शुरू की गई थी, जिसका उद्देश्य रोजगार सृजन और आर्थिक विकास पर प्रत्यक्ष और बहुस्तरीय प्रभाव के लिए तीर्थ और विरासत पर्यटन स्थलों का दोहन करने हेतु बुनियादी ढांचे के विकास पर ध्यान केंद्रित करना है। बुनियादी ढांचे में पर्यटक सुविधा केंद्र, पार्किंग, सार्वजनिक सुविधा, रोशनी और ध्वनि और लाइट शो शामिल हैं।

तीर्थयात्रियों को लुभाएगी बासुदेव वाटिका

यमुना पार दर्शन करने को जाने वाले तीर्थयात्रियों को बासुदेव वाटिका लुभाएगी। ये पार्क बन जाने से गोकुल, महावन व बल्देव में तीर्थाटन को और पंख लगेंगे।

गोकुल बैराज के समीप सिंचाई विभाग की गड्ढे की जमीन पर मनभावन पार्क बनाने का प्रोजेक्ट पर जल्दी ही काम होना है। यहां बासुदेव जी सिर पर बालकृष्ण को ले जाते हुए एक बड़ी प्रतिमा लगनी है। यह बहुत रमणीक स्थल बनेगा। इसके लिए प्रस्ताव उ.प्र. ब्रज तीर्थ विकास परिषद ने पिछली बैठक में पारित करा लिया था।

तीर्थयात्रियों को जाम से निजात दिलाएगा रिवर ट्रांसपोर्टेशन

भविष्य में यमुना में रिवर ट्रासंपोर्टेशन से तीर्थयात्रियों को वृंदावन व मथुरा की जाम की समस्या से निजात मिलेगी।

निकट भविष्य में वृंदावन के केशीघाट और उसके आसपास के घाटों, मथुरा के विश्राम घाट, गोकुल बैराज, गोकुल के घाटों तक रिवर ट्रांसपोर्ट की सुविधा उपलब्ध होगी। मथुरा-वृंदावन की घनी आबादी के कारण यात्री यमुना के घाटों तक नहीं पहुंच पाते। रास्तों में भीड़ के चलते जाम की समस्या उत्पन्न होती है। ऐसे में यमुना में स्टीमर से तीर्थयात्री आसानी से कुछ ही समय में मथुरा से वृंदावन या वृंदावन से मथुरा आ जा सकेंगे। इस प्रोजेक्ट पर कार्य तेजी से चल रहा है।

ब्रज में खारे पानी की समस्या है। इसके समाधान के लिए कोसीकलां में वाटर पार्क बनाने का प्रोजेक्टर पर कार्य किया जा रहा है, जहां पर लोगों को जल के महत्व और उपयोगिता के बारे में जानकारी मिलेगी।

सुनील शर्मा

महिमा ब्रज धूलि की...

ब्रज के वन-उपवन, कुन्ज-निकुन्ज, श्री यमुना व गिरिराज अत्यन्त मोहक हैं। पक्षियों का मधुर स्वर एकांकी स्थली को मादक एवं मनोहर बनाता है। साहित्य और कलाओं के विकास के लिए यह उपयुक्त स्थली है। संगीत, नृत्य एवं अभिनय ब्रज संस्कृति के प्राण बने हैं। ब्रजभूमि अनेकानेक मठों, मन्दिरों, महंतों, महात्माओं और महामनीषियों की महिमा से वन्दनीय है। यह सभी सम्प्रदायों की आराधना स्थली है। ब्रज की रज का माहात्मय भक्तों के लिए सर्वोपरि है। सन्त गोस्वामी नरायणभट्ट कहते हैं- "जैसे शास्त्रों में श्रेष्ठ श्रीमद्भागवत

श्रीकृष्ण का विग्रह है वैसे ही पृथ्वी लोक में वनों सहित व्रजमण्डल भी श्रीकृष्ण का स्वरुप है।" श्रीराधामाधव एवं उनके सखा एवं गोपियों की नित्य लीलाओं को जहां आधार प्राप्त हुआ है उस धाम को रसिक भक्तों ने ब्रजधाम कहा है। ब्रज की महिमा के बारे में कुछ पंक्तियां प्रस्तुत है–

ब्रज रज की महिमा अमर, ब्रज रस की है खान,
ब्रज रज माथे पर चढ़े, ब्रज है स्वर्ग समान।
भोली-भाली राधिका, भोले कृष्ण कुमार,
कुंज गलिन खेलत फिरें, ब्रज रज चरण पखार।
ब्रज की रज चंदन बनी, माटी बनी अबीर,
कृष्ण प्रेम रंग घोल के, लिपटे सब ब्रज वीर।
ब्रज की रज भक्ति बनी, ब्रज है कान्हा रूप,
कण-कण में माधव बसे, कृष्ण समान स्वरूप।
राधा ऐसी बावरी, कृष्ण चरण की आस,
छलिया मन ही ले गयो, अब किस पर विश्वास।
ब्रज की रज मखमल बनी, कृष्ण भक्ति का राग,
गिरिराज की परिक्रमा, कृष्ण चरण अनुराग।
वंशीवट यमुना बहे, राधा संग ब्रजधाम,
कृष्ण नाम की लहरियां, निकले आठों याम।
गोकुल की गलियां भलीं, कृष्ण चरणों की थाप,
अपने माथे पर लगा, धन्य भाग भईं आप।
ब्रज की रज माथे लगा, रटे कन्हाई नाम,
जब शरीर प्राणन तजे, मिले कृष्ण का धाम।

वृंदावन भक्ति क्षेत्र है और वृंदावन की रज भी पवित्र है। ब्रज रज को अति आराध्य कहा गया है। इस रज में कीट-पतंग भी प्रवेश करें तो भगवान स्वरूप हैं। फिर मानव की तो महिमा को क्या कहें। लेकिन तीर्थ का सेवन संयम नियम से करना है। शास्त्र आज्ञा है। अन्य क्षेत्र में किया पाप तीर्थ में समाप्त होता है। लेकिन तीर्थ में किया गया पाप लोहे के कवच जैसा होता है। जो कहीं साफ नहीं होता।

ब्रज की धूलि की क्या महिमा है?

भागवत जी में कहा गया है कि महान आत्मा के चरणों की धूल में नहाए बिना, कोई भी अन्य माध्यम से भगवान को जानने की उम्मीद नहीं कर सकता है। वृंदावन की विशेषता यह है कि यहां न केवल राधा और कृष्ण के चरणों की धूल आज भी मौजूद है। साथ ही प्रति वर्ष यहां लाखों तीर्थ यात्री आते हैं सभी भक्तों के नंगे पैरों के स्पर्श से यहां की जमीन भी पवित्र बन जाती हैं, क्योंकि वे यहां के सभी मंदिरों में जाते हैं और पवित्र भूमि की परिक्रमा भी करते हैं। यह ऐसा है मानो उनकी पूरी आध्यात्मिक ऊर्जा उनके पैरों के माध्यम से धूल के रूप में चली गई हो। भक्ति जितनी अधिक होती है, उतनी ही अधिक ऊर्जा उस जमीन में प्रवाहित होती है।

वृंदावन के 'धूलोट' उत्सव का महत्व क्या है

महोत्सव यानी ब्रज की पवित्र धूल 'ब्रज रज' में लोटने का पर्व। ब्रज रज की वंदना वृंदावन के दिव्य युगल की भक्ति और उनकी कृपा पाने की शुरुआत करना है। आपको ब्रज रज की महिमा को जानने के लिए पहले श्री राधा कृष्ण को जानना होगा।

ब्रज रज का इतिहास और उसकी महत्ता

ब्रज की माँटी को ब्रज रज कहा जाता है। यूं तो माँटी को मिट्टी, बालू, इत्यादि भी कहा जाता है परन्तु ब्रज की माँटी को विशेषकर धार्मिक आस्था और परंपरा के अनुसार ब्रज रज कहते हैं। ब्रज रज से लोग तिलक लगाते हैं तथा हवन आदि में भी ब्रज रज का उपयोग किया जाता हैं। जिसे भगवान श्रीकृष्ण और राधारानी की लीला भूमि की माँटी भी कहा जाता है। धार्मिक आस्थावान लोग इसे बहुत ही पवित्र मान कर इसे माथे पर लगाते है।

इतिहासकारों के अनुसार ब्रज के तीन अर्थ बतलाये गये हैं- (गायों का खिरक), मार्ग और वृंद (झुंड) - सामान्यत: व्रज का अर्थ गोष्ठ किया है। गोष्ठ के दो प्रकार हैं - खिरक वह स्थान जहाँ गायें, बैल, बछड़े आदि को बाँधा जाता है। गोचर भूमि- जहाँ गायें चरती हैं। इन सब से भी गायों के स्थान का ही बोध होता है।

इस कारण इस भूमण्डल को ब्रज मण्डल कहा गया है। यमुना को विरजा भी कहते हैं। विरजा का क्षेत्र होने से मथुरा मंडल विरजा या व्रज कहा जाने लगा। महाभारत के युद्धोपरांत जब द्वारका नष्ट हो गई, तब श्रीकृष्ण के प्रपौत्र वज्र (वज्रनाभ) मथुरा के राजा हुए थे। उनके नाम पर मथुरा मंडल भी वज्र प्रदेश कहा जाने लगा।

कुल मिलाकर वेदों से लेकर पुराणों तक ब्रज का संबंध गायों से रहा है। चाहे वह गायों के बाँधने का बाड़ा हो, चाहे गोशाला हो, चाहे गोचर-भूमि हो और चाहे गोप-बस्ती हो। भागवत वक्ताओं की दृष्टि में गोष्ठ,

गोकुल और ब्रज समानार्थक शब्द हैं। भागवत के आधार पर सूरदास आदि कवियों की रचनाओं में भी ब्रज इसी अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। मथुरा और उसका निकटवर्ती भू-भाग प्रागैतिहासिक काल से ही अपने सघन वनों, विस्तृत चरागाहों, सुंदर गोष्ठों और दुधारू गायों के लिए प्रसिद्ध रहा है। भगवान श्रीकृष्ण का जन्म यद्यपि मथुरा में हुआ था, उनका शैशव एवं बाल्यकाल गोपराज नंद और उनकी पत्नी यशोदा के लालन-पालन में बीता था। उनका सान्निध्य गोपों, गोपियों एवं गो-धन के साथ रहा था। वस्तुत: वेदों से लेकर पुराणों तक ब्रज का संबंध अधिकतर गायों से रहा है। चाहे वह गायों के चरने की गोचर भूमि हो चाहे उन्हें बाँधने का खिरक (बाड़ा) हो, चाहे गोशाला हो, और चाहे गोप-बस्ती हो।

दक्षिण भारत से एक समय एक कृष्ण भक्त वैष्णव साधु वृंदावन की यात्रा के लिए आए थे। एक बार वे गोवर्धन (गिरिराज) की परिक्रमा के लिए गए। हाथ में करमाला लेकर जप करते हुए परिक्रमा मार्ग पर मंद गति से चल रहे थे। दोपहर हो गई। बाबा की भिक्षा शेष थी, परंतु परिक्रमा मार्ग पर भिक्षा मिलना संभव नहीं है, यह मानकर वे चलते रहे।

थोड़ी देर तक इस प्रकार चलने के बाद सामने से आती हुई एक किसान स्त्री दिखाई दी। वह अपने घर से खेत में जा रही थी। उसके सिर पर टोकरी में भोजन था। दोपहर का समय है, और बाबा भूखे होंगे, यह सोचकर उसने बाबा से पूछा कि बाबा भोजन पाओगे (करेंगे) ? दोपहर का समय था, बाबा को भूख भी लगी थी और यह भोजन तो अनायास ही सामने आया जानकर बाबा ने भोजन के निमंत्रण को स्वीकार किया।

उस स्त्री ने खाद्य सामग्री से भरा टोकरा सिर से उतार कर नीचे रखा। गेहूं की रोटी, सब्जी और दाल इत्यादि से टोकरा पूरा भरा हुआ था। सारी सामग्री एक कपड़े से ढकी हुई थी। उस कपड़े पर उस स्त्री ने अपनी चप्पले रखी हुईं थी। यह गांव की औरतों की आदत होती है कि कई बार वे अपनी चप्पले सिर पर रखे टोकरे में रख देती है, और खुद नंगे पैर चलती है। इस स्त्री ने भी अपनी चप्पले भोजन के टोकरे पर ही रखी हुईं थीं।

बाबा जी की स्वीकृति पाकर चप्पले नीचे रखकर उसने भोजन पर ढका हुआ कपड़े का टुकड़ा हटाया और भोजन परोसने की तैयारी करने लगी। यह देखकर वैष्णव संस्कार में पले बढ़े साधु महाराज चौंक उठे, उन्होंने लगभग गर्जना करते हुए कहा कि "अरे तुमने अपनी धूल से सनी जूतियां भोजन पर रखी हैं।" और ऐसा अशुद्ध भोजन मुझे दे रही हो ? क्या ऐसा धूल वाला भोजन हम ग्रहण करें ? तुम में तो बिलकुल भी अक्ल नहीं है। तुम्हारी ऐसी धूल वाली गंदी जूतियों ने भोजन अशुद्ध कर दिया है। रखो अपना भोजन अपने पास। अप्रसन्न साधु

भोजन का त्याग करके चल दिए, परंतु वह बृजवासी स्त्री तनिक भी विचलित नहीं हुई और मुस्कुराने लगी।

बृज नारी देवी ने बाबा को मर्म वेदी उत्तर दिया कि "अरे! तौ कूँ बाबा कौन्ने बनाय दियौ? तू सच्चौ बाबा नायं। अरे यह धूल नाय है, जे तौ ब्रजरज है। यह ब्रजरज तो राधा-कृष्ण की चरणरज है। ब्रजरज को कौन धूल कहता है? तू बाबा बना है और तुझे इतना भी मालूम नहीं है? साधु बाबा को ब्रज का मर्म मानो बिंद गया हो। एक भोली भाली अनपढ़ किसान स्त्री के द्वारा कहे गये सही शब्द साधु बाबा के दिल पर उतर गए।

इस सीधी-सादी ब्रजनारी के ऐसे प्रेमयुक्त कथन सुनकर साधु बाबा की आंखों में से सावन भादौं की बरसात होने लगी। चेहरा कृष्ण प्रेम से भाव विभोर हो गया। शरीर कांपने लगा। साधु महाराज हाथ जोड़कर अपने अपराध के लिए क्षमा मांगने लगे। कहने लगे कि मईया मुझसे गलती हो गई, मैया मुझे क्षमा कर दे। सच बताया, कि यह धूल नहीं है। यह तो ब्रजरज है, राधाकृष्ण की चरणरज है। तुमने मेरी आंखें खोल दी। मैया, मुझे क्षमा कर दो। बाबा ने बार-बार उस ब्रजवासी महिला को साष्टांग प्रणाम किया, और फूट-फूट कर रोते हुए ब्रज की रज को बार बार अपने शरीर पर मलने लगे।

बाबा की यह दशा देखकर उन्हें आश्वासन देते हुए उसने कहा कि "अरे कोई बात नाय बाबा। हमारी राधारानी बहुत बड़े दिलवाली हैं। वह सबको माफ करती रहती है। इतना शोक मत करो। यह कहकर उसने साधु बाबा को भोजन परोस दिया। बाबा "राधेकृष्ण राधेकृष्ण" बोलते हुए भोजन को पा लिया और गोवर्धन की वह गोपी अपने खेत की ओर चली गयी।

"ब्रज रज" : ब्रज की मिट्टी को रज क्यों बोला गया है?

सम्पूर्ण कामनाओं और श्रीकृष्ण भक्ति को प्राप्त करने के लिए "ब्रज" ही है। भगवान ने बाल्यकाल में यहाँ अनेकों लीलाएं की हैं! उन सभी लीलाओं का प्रत्यक्ष द्रष्टा है श्री गोवर्धन पर्वत, श्री यमुना जी और यहाँ की "रज"। यहाँ की मिट्टी को रज बोला गया है इसके पीछे जो कारण है वह यह कि भगवान ने इसको खाया और माता यशोदा के डाँटने पर इस मिट्टी को उगल भी दिया था। इसके पीछे बहुत कारण हैं जिनमें सबसे मुख्य इसको अपना प्रसादी बना देना था क्योंकि ऐसा कोई प्रसाद नहीं जो जन्म जन्मांतर यथावत बना रहे इसीलिए भगवान ने ब्रजवासियों को ऐसा प्रसाद दिया जो न तो कभी दूषित होगा और न ही इसका कभी अंत होगा।

भगवान श्रीकृष्ण ने अपने "ब्रज" यानि अपने निज गोलोक धाम में समस्त तीर्थों को स्थापित कर दिया चूँकि जहाँ परिपूर्णतम ब्रह्म स्वयं वास करें वहां समस्त तीर्थ स्वत: ही आने की इच्छा रखते हों, लेकिन ब्रजवासियों को किसी प्रकार का भ्रम न हो इसके लिए भगवान ने उनके सामने ही समस्त तीर्थ स्थानों को सूक्ष्म रूप में यहाँ स्थापित किया था।

श्रीकृष्ण का मानना था कि केवल ब्रजवासियों को ही ये उत्तम रस प्राप्त है क्योंकि इनके रूप में मैं स्वयं विद्यमान हूँ ये मेरी अपनी निजी प्रकृति से ही प्रगट हैं, अन्य जीव मात्र में मैं आत्मा रूप में विराजित हूँ लेकिन ब्रजजनों का और मेरा स्वरुप तो एक ही है, इनका हर एक कर्म मेरी ही लीला है, इसमें कोई संशय नहीं समझना चाहिए।

माता यशोदा को तीर्थाटन की जब इच्छा हुई तो भगवान ने चारों धाम यहाँ संकल्प मात्र से ही प्रगट कर दिए थे। यहाँ रहकर जीव की जन्म और मृत्यु मात्र लीला है मेरा पार्षद मेरे ही निज धाम को प्राप्त होता है इसलिए संस्कार का भी यहाँ कोई महत्त्व नहीं ऐसी प्रभु वाणी में है!

यहाँ जन्म और मृत्यु दोनों मेरी कृपा के द्वारा ही जीव को प्राप्त होते है एवं प्रत्येक जीव मात्र जो यहाँ निवास करता है वह नित्य मुक्त है। उसकी मुक्ति के उपाय के लिए किये गए कर्मों का महत्त्व कुछ नहीं है। मेरे इस परम धाम को प्राप्त करने के लिए समस्त ब्रह्मांड में अनेकों ऋषि, मुनि, गन्धर्व, यक्ष, प्रजापति, देवतागण, नागलोक के समस्त प्राणी निरंतर मुझे भजते हैं लेकिन फिर भी उनको इसकी प्राप्ति इतनी सहज नहीं है। मेरी चरण रज ही इस ब्रज (गोलोक धाम) की रज है जिसमें मेरी लीलाओं का दर्शन है।

साधु अनाथ बन्धुदास जी

राधाकुण्ड के भजनानन्द साधु अनाथ बन्धुदास ने इस सम्बन्ध में बताया कि जेष्ठ माह में कृष्ण पक्ष की एकादशी को माँ जाहन्वा का जब ब्रज में अपने शिष्यों के

साथ आगमन हुआ था और उन्होंने यहां जीव गोस्वामी पाद से मिल कर वे काम्यवन में भी गयीं थी। वहां वह गोपीनाथ जी के मंदिर के श्रीविग्रह को माला पहनाने गयीं थीं, उस समय मंदिर के पट बन्द हो गये थे बाद में देखा गया कि राधारानी को दायें तरफ करके वह स्वयं वायें तरफ में खड़ी हैं यह चमत्कार लोगों ने उस समय देखा था। माँ जाहन्वा के गोपीनाथ से यह परम्परा चली आ रही है एकादशी को भक्त लोग कुण्ड की परिक्रमा करके कीर्तन, आरती के पश्चात धूलोट उत्सव शुरू करते हैं।

महाप्रभु जी का उस समय का एक पद है

नाचिते न जानी तबहु नाचिया गौरांग बोली।
गाइते न जानी तबहु गायी, सुखे थाकी,
दु:खेते थाकी हा गौरांग, ऐई भाव ही निरन्तर चाही।
ऐई तो ब्रजेर धूला रे भाई ऐई तो ब्रजेर धूला।
ऐई धूला मेखे छीलो नन्देर बेटा कानू,
गाय तो माखो रे भाई ऐई ब्रजेर धूला॥

उन्होंने कहा कि यह कोई सामान्य धूल नहीं है यह ब्रज की गोपियों और राधारानी का स्थान है। यह राधा की पद रेनु है। धूला उत्सव एक परम्परा है कृष्ण जब बाल्य काल में इस रज में लोट पोट हुए, यहां पर राधारानी के चरणों की धूल भी है।

इस धूलोट उत्सव में हम लोग भी अपने जीवन को धन्य करने के लिए इस ब्रज रज में लोट लगाते हैं।

महंत श्री युगल चरण दास जी

सबसे पहले गुरूजनों को यह रज लगाकर फिर हम सभी इसमें लोटते हैं कीर्तन करते हैं यह परम्परा सदियों से इसी प्रकार से चली आ रही है जिसे हम धूलोट उत्सव के रूप में मनाते हैं।

इसी प्रकार वृन्दावन भागवत निवास के महन्त श्री युगल चरण दास ने धूलोट उत्सव के विषय में बताते हुए कहा कि धूलोट उत्सव माँ जाहन्वा के आगमन के

साथ शुरू हो गया था। नित्यानन्द प्रभु जब ब्रज में पधारे थे तब उन्होंने कामा स्थित गोपीनाथ मंदिर की स्थापना के बाद में उन्होंने ब्रज में वास किया था इसी उपलक्ष्य में धूलोट उत्सव को मनाया जाता है। यह करीब 9 वीं या 10 वीं सदी की वात है, जब माँ जाहन्वा का आगमन ब्रज में हुआ था उस समय को उत्सव के रूप में मनाया जाता है। जिसमें संकीर्तन, भण्डारा आदि का आयोजन भी किया जाता है।

धूलोट उत्सव क्यों मनाया जाता है?

ब्रज की धूल कोई साधारण धूल नहीं है इसे ब्रह्मा आदि ने भी अपने शरीर पर धारण किया था। भगवान श्रीकृष्ण ने जब उद्धवजी को ब्रज में भेजा था तब उन्होंने भी यही कामना की थी कि मेरा भी इसी भूमि में, और इसी धूली में जन्म हो, ऐसी कृपा प्रभु मुझ पर करें। शिव जी भी इस धूल को अपने माथे पर लगाते हैं और आज भी वृन्दावन में गोपेश्वर महादेव के रूप में विराजमान हैं। इन्हीं परम्पराओं के साथ आचार्यों की परम्पराओं और भागवत परम्पराओं को लेकर ही हम लोग धूलोट उत्सव मनाते हैं। इस भूमि की इस धूलि में लोट पोट होना ब्रज की रज को अपने ऊपर लपेटना होता है क्यों कि हमारा जन्म भी रज से ही हुआ है इसी रज से सभी प्रकार के अन्न की उत्पत्ति होती है और उसी से वीर्य बनता है और उसी से जीव मात्र की उत्पत्ति होती है। और अन्त में हमें इसी रज में ही मिल जाना है तीन तरह की गति होती है जला दिया जाता है, जल में वहा दिया जाता है, या जमीन में समाधि दी जाती है। तीनों ही स्थिति में रज में ही मिलना होता है चाहें यमुनाजी या गंगा जी में भी रज ही मिलेगी कुल मिला कर रज में ही मिल जाना है।

उन्होंने बताया कि यह धूलोट उत्सव जेष्ठ माह में कृष्ण पक्ष की एकादशी को शुरू होता है और तीन दिनों तक चलता है यह आयोजन विशेष कर राधाकुण्ड में मनाया जाता है क्यों कि माँ जाहन्वा का आगमन इसी समय हुआ था। माँ जाहन्वा नित्यानन्द प्रभु की आदि शक्ति हैं शक्ति स्वरूपा हैं। नित्यानन्द प्रभु के पारायण करने के उपरान्त वह ब्रज में अपने शिष्यों के साथ आयीं थीं। तब गौड़ीय सम्प्रदाय के षट् गोस्वामी पाद आचार्यों ने इस उत्सव को शुरू किया था।

यह उत्सव वृन्दावन स्थित भागवत निवास में भी मनाया जाता है रघुनाथ गोस्वामी पाद को चैतन्य महाप्रभु ने एक गिर्राज शिला जो कि उनकी सेवा में थी को जगन्नाथकुटी के गम्भीरा में उनको दी थी। गोस्वामी पाद

नियमित उसकी सेवा पूजा करते थे, भाव विभोर होकर सेवा करते समय वह अपने अंगूठे के ऊपर गिर्राज शिला को रख कर जल प्रदान करते थे। जिसके कारण गोस्वामी पाद का अंगूठा ही गिर्राज शिला में समा गया था आज भी वह दिव्य गिर्राज शिला भागवत निवास में पूजित है। लगभग 500 वर्षों पूर्व के गिर्राज जी यहां सेवित हैं जिन्हें गिरेन्द्र बिहारी जी के नाम से जाना जाता है जिसकी अनवरत सेवा पूजा यहां चल रही है।

उन्होंने बताया कि नित्यानन्द प्रभु के ब्रज में आगमन के पश्चात माँ जाहन्वा का जब ब्रज में आगमन हुआ था उस समय को धूलोट उत्सव के रूप में मनाया जाता है। स्वयं भगवान श्रीकृष्ण ने गोचारण लीला करने जाते थे उस समय कृष्ण बलराम के शरीर पर यह धूली यह रज गायों के खुरों के माध्यम से उड़ कर उनके शरीर को स्पर्श करती थी यानी लिपट जाती थी।

इसको लेकर एक सुन्दर भाव प्रकट करते हुए बताया कि राधारानी कह रही हैं कि वह सब समय कृष्ण से नहीं मिल पाती हैं क्यों कि माता-पिता हैं, गुरूजन हैं, भाई-बन्धु हैं, हर समय श्रीकृष्ण से मिल पाना सम्भव नहीं हो पाता है तो वह ललिता सखी से कहती हैं कि "है ललिते सखी मैं क्यों न भई ब्रज की धूल, होती यदि ब्रज की धूल तो, लिपटती श्याम सुन्दर के अंग सों, न रहती लोक लाज, न रहती कुल की मर्यादा" गौ खुरों से स्पर्श करके श्याम के अंग से लिपट जाती मुख मण्डल से लिपट जाती उनकी अलकावली में भी लिपट जाती, इसके पीछे गहरा भाव छिपा है।

हम सब इसी रज के जरिये मुक्ति को प्राप्त करते हैं। यह भजन साधना राधारानी के ब्रज की रज को प्राप्ति का माध्यम है, प्रिया प्रियतम की कृपा हमें मिले भगवत प्राप्ति हमें मिले, राधारानी की कृपा प्राप्ति के लिए ब्रज रज की प्राप्ति हो, यही कामना के साथ धूलोट उत्सव मनाया जाता है।

★★★

संकीर्त्तन

डॉ. चन्द्रभान रावत

भक्ति के दर्शन और साधना में एक समान सूत्र संचरित है कीर्तन। यह तत्व भक्ति के सभी रूपों में अनुस्यूत है। नवधा भक्ति में भी और रागानुगा भक्ति में भी। भक्ति के निर्गुण और सगुण धारा से संबद्ध सभी सम्प्रदाय कीर्तन की अलौकिक भक्ति का अनुगायन करते हैं। दार्शनिक दृष्टि से कीर्तन : संकीर्तन चिरंतन नादतत्व से जुड़ जाता है और इस प्रक्रिया से नाम जप की साधना लय और ताल के माध्यम से दिव्य संगीत में परिणत होती है। मूल तत्व जब जागतिक और मानवीय संदर्भों में अवतरित होता है, तो चार सरणियाँ घटित होती हैं रू नाम, गुण, रूप और लीला। संकीर्तन केवल 'नाम' साधना को ही प्रगल्भ और व्यापक नहीं बनाता, गुण, रूप और लीला को भी गेय बना कर संवेद्य बनाता है।

कीर्तन शब्द उसी धातु से बना है, जिससे कीर्ति शब्द व्युत्पन्न हुआ है।1 कृतु+लृट्। इसका अर्थ है- कथन या वर्णन। इस शब्द का अर्थ संकोच हुआ : ईश्वर या उसके अवतारों से संबंधित वर्णन या कथन। इससे सम्बन्धित संगीत- विधा 'भजन' है। भागवत में इसका प्रयोग इसी रूप में हुआ है।2 भक्ति के प्रकारों में से एक 'कीर्तन' हो गया। 'श्रवणं कीर्तनं विष्णो: स्मरणं पाद सेवनम्'। भक्ति साहित्य भी कीर्तन-मय हो गया है।

वैष्णव मंदिरों की चर्चा में संकीर्तन का प्रमुख स्थान बन गया। इस चर्चा का कीर्तन एक अनिवार्य तत्व बन गया। नित्योत्सव, वर्षोत्सव, अष्टयाम लीला तथा झाँकियों से सम्बन्धित विपुल पद-साहित्य की रचना मंदिर से सम्बन्धित भक्त कवियों ने की। कीर्तन संग्रह भी छपे। यह विधा काव्य और संगीत कलाओं के सामंजस्य से सजीव बनी। इसकी लोकप्रियता इस बात से प्रमाणित है कि आईने अकबरी की गायकों की सूचियों में एक गायक वर्ग 'कीर्तनियाँ' नाम से अभिहित मिलता है। ये ब्राह्मण होते थे। ये पुराने वाद्ययंत्रों का प्रयोग करते थे। ये सुन्दर बालकों को स्त्री रूप में सजाकर उनसे कृष्ण लीलाओं और स्तुतियों का गान कराते थे। इस प्रकार रासधारी और संकीर्तनकार मिल कर इस विधा का दृश्य-श्रवण रूप प्रदान करते थे। तेलुगु क्षेत्र के दोक्या के गीतों का गायन इसी पद्धति से होता था। कुछ कीर्तन शुद्ध संगीतात्मक होते थे। उनमें अभिनय का तत्व नहीं रहता था। दक्षिण के त्यागराज की कीर्तन पद्धति इसी प्रकार की थी। इस प्रकार व्यापक रूप में कीर्तन काव्य, संगीत, गीत, कथा और नाट्य से समन्वित हो गया और शुद्ध गायन के रूप में भी चलता रहा।

शुद्ध संकीर्तन संगीत में राग-रागनियों का विलास रहता है। राग-रागनियों के नामों से अंकित पदों की परम्परा सिद्धों3, नाथों4 और निर्गुणियाँ संतों से होती हुई 'ब्रजभाषा के भक्त' गायकों में शिखरस्थ होती है। कीर्तन संगीत की भाषा ब्रजभाषा बन गई या ब्रज पर आधारित भाषा बनी। तात्पर्य यह है कि कीर्तन संगीत वैष्णव मंदिरों की नित्य नैमित्तिकचर्या का प्राण-संस्थान है।

संसार में धर्म और साधना के प्राय: दो रूप मिलते हैं। एक रूप वह है जिसमें प्राय: सभी ललित कलाओं का निषेध रहता है और दूसरा रूप साध्य की परिकल्पना। साधना की विधि और क्रिया तथा आध्यात्मिक जीवन में ललित कलाओं को स्वीकार करके चलती है। कृष्ण केन्द्रित रागानुगा भक्ति, इस्लाम का सूफीमत, ईसाई रहस्यवाद दूसरे रूप के अन्तर्गत आते हैं। चैतन्य संप्रदाय में विशेष रूप से और सभी भक्ति-सम्प्रदायों में सामान्य रूप से काव्य, संगीत आदि ललित कलाओं की स्वीकृति ही नहीं, अनिवार्यता भी है। चैतन्य सम्प्रदाय में संगीत वाद्य-नृत्य मय संकीर्तन साधना का अनिवार्य तत्त्व है।

ब्रह्म या इष्टदेव की परिकल्पना भी संगीतमय है। संगीत का आधार नाद है। नाद ब्रह्म है। ब्रह्म का प्रथम भूतात्मक आविर्भाव आकाश के रूप में हुआ और आकाश का गुण नाद। अनहद नाद ही ओंकार है।5 इसी की शक्ति से प्रकृति अव्यक्त अवस्था से व्यक्त अवस्था में संक्रमित होती है। यही समस्त श्रुति का बीज है।6

ब्रह्म ही समस्त ऐहिक और आध्यात्मिक गानों का विषय है।7 समस्त राग-रागनियाँ शिव-पार्वती से उद्‌भूत मानी जाती है। साथ ही राग-रागनियों को विष्णु स्वरूप भी कहा गया है।8 विष्णु का शंख युद्धारम्भ के बाद का ही प्रतीक है। शिव के तांडव नृत्य के साथ मृदंग की संगत विष्णु ने ही की थी।9 समुद्र-मंथन के समय विष्णु ने ही शंखनाद किया था जिससे संगीत के सप्त स्वरों का आविर्भाव हुआ।10

रामावतार की परिकल्पना में भी संगीत का तत्व है। वाल्मीकि के राम संगीत कुशल थे।

"गान्धर्वे च भुवि श्रेष्ठः बभूव भरताग्रजः।"11

दक्षिण के भक्त प्रवर संगीत सम्राट त्यागराज स्वामी ने राम के लिए ऐसे विशेषणों का प्रयोग किया है, जिनसे उनका संगीत सम्बन्ध स्पष्ट होता है- संगीत लोल, सामगान लोल आदि।

कृष्णावतार की कल्पना तो पूर्णतः संगीतमय है। उन्होंने गीता के विभूति भाग में अपने को सामवेद कहा है।12 उनके वंशीधर, नटवर अभिधान संगीतमय हैं। कृष्ण की सभी ब्रजलीलाऐं वंशीनाद से निनादित हैं। उनकी त्रिभंगी मुद्रा नृत्य से सम्बन्धित है। इसके साथ ही साध्य संगीत प्रिय भी है, वह संगीत से संतुष्ट होता है:-

नाहं वसामि वैकुण्ठे, योगिना हृदये न च,
मद्भक्ताः यत्र गायन्ति, तत्र तिष्ठामि नारद॥

देवेश विष्णु सामवेद के द्वारा ही प्रसन्न होते हैं। विष्णु नाम का संगीतमय गायन सामवेद के समान ही फलप्रद होता है और वे नर्तन से भी तुष्ट होते हैं।

कृष्ण भी संगीतप्रिय है।13 अनुश्रुति के अनुसार जब गोपियों ने कृष्ण के सम्मुख गीत गाया, तो उससे सोलह हजार रागिनियाँ उत्पन्न हुईं।

जब साध्य का स्वरूप ही संगीतमय है तो उसकी साधना भी संगीतमय होगी ही। उपास्य के कुछ प्रिय रागों की ओर भी संकेत किया गया। विष्णु के प्रिय राग ये हैं: 'मानव कौशिक', 'ककुभ' और 'कल्याण नट'। विष्णु और उनके अवतार के आधार पर रागों का नामकरण भी हुआ। जैसे- नारायण गोल, नट नारायण, रामक्रिया, चक्रधर, रासेश्वरी, रामकली। कृष्ण मत के रागों में हिन्दोल, आसावरी और बिलावल (बेलावली) आदि प्रचलित रहे। कनड़ा या कान्हरा कृष्ण सम्प्रदाय का प्रतीक राग ही बन गया। इससे कृष्ण की भाव-भक्ति सिद्ध होती है। नटनारायण से वैष्णव पूजा जीवंत बनती है। रागानुगा भक्ति साधना का तो आधारभूत तत्व संगीत संकीर्तन है। प्रत्येक साधना का लक्ष्य है- उपास्य को प्रकट करना। यह विश्वास है कि राग-साधना से उपास्य का साक्षात्कार संभव हो जाता है।

उपास्य के दो रूप माने गये हैं: नादमाया रूप और देवमाया रूप। नादमाया रूप स्वर ताल गम्य है। देवमाया रूप ध्यान गम्य है। इसमें चित्र, मूर्ति, मंदिर तथा मनोर्बिब आते हैं। पहले रूप का सम्बन्ध काव्य और संगीत है। इस प्रकार भक्ति साधना में पाँचों ललित कलाओं का अभिनिवेश हो जाता है।

भक्ति साधना में राग भक्त के भावों को संवेगात्मक तन्यमता प्रदान करता है। भक्त मानस के गहन चेतना स्तरों की अव्यक्त भाव-सारणियाँ राग-संगीत कीर्तन से प्रेरित होकर झंकृत और अभिव्यक्त हो जाती हैं। इस प्रक्रिया से भक्त मानस को 'ब्रह्म संबंध' प्राप्त होता है। इस रागात्मक तादात्मय के लिए आवश्यक तल्लीनता संगीत-संकीर्तन के माध्यम से सिद्ध हो जाता है। नारद ने इसी भूमिका को ध्यान में रखते हुए कहा है-

"तस्याः साधनानि गायन्त्याचार्याः
सोकेऽपि भगवद्गुण श्रवण कीर्तनात्।"

यह संगीतात्मक आध्यात्मिक साधना की प्रकृति लोक मानस के अनुकूल है। जहाँ यह साधना भक्त के ब्रह्म सम्बन्ध को सम्भव करती है, वहाँ लोकमानस के साथ भी भक्त और ब्रह्म का सम्बन्ध स्थापित होता है। लोक मानस के साथ आचार्य मानस जुड़ जाता है और भक्ति साधना को एक वृहत्तर सन्दर्भ प्राप्त होता है।

इस माध्यम का व्यापक उपयोग श्री चैतन्य महाप्रभु ने किया। महाप्रभु की यात्राएँ संकीर्तनमय होती थीं। उनका अभियान समाजाध्यात्मिक था। इस द्विमुखी अभियान की सिद्धि संकीर्तन के माध्यम से हुई। इन संकीर्तन यात्राओं से जनमन रस सिक्त हो जाता था। इस प्रकार लोकमानस का परिष्कार बिना किसी औपचारिक उपदेश के होता था। उसमें एक नवसंचार जगता था, जो सामाजिक और आध्यात्मिक अनुभूतियों का संगम बनता था। भक्ति-काल में समस्त भारत के क्षितिज संकीर्तन गायन से निनादित हो गये। सारे लोक-पथ संकीर्तन मय वैष्णव यात्राओं के साक्षी बने।

संदर्भ सूची

1. मोनियर विलियम्स, संस्कृत इंगलिश डिक्शनरी।
2. भागवत, 7.5.23
3. सरहपाद के पदों में गूजरी, आदि, शंतिया में राग रामश्री, आदि तथा भूसुकपा में राग बराडी, कंण्डु गुजारी, आदि लुईपाद में षटमंजरी आदि मिलते हैं।
4. नाथों के पद भी राग नामांकित हैं।
5. श्रीमद्भागवत 12.6.37
6. वही, 12.6.39-41
7. ब्रह्मसूत्र 1.1.20, पर शांकरभाष्य
8. विष्णुपुराण
9. प्रोजेश बनर्जी, डांस ऑफ इंडिया, पृ. 9
10. उमेश जोशी, भारतीय संगीत का इतिहास, पृ. 38
11. रामायण, अयोध्या. 2.2.34
12. वेदानां सामवेदोस्मि गीता
13. शार्ङ्धर, संगीत रत्नाकर, 1.1.26

★★★

मथुरा डॉक पंजीयन संख्या-070/2022-24 पंजीयन संख्या UPHIN 2003/11917

उ0प्र0 ब्रज तीर्थ विकास परिषद, मथुरा द्वारा संचालित

गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी, वृन्दावन

में

एक वर्षीय रासलीला विशिष्ट सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम

(भातखंडे संस्कृति विश्वविद्यालय, लखनऊ से मान्यता प्राप्त)

(उ.प्र. संस्कृति विभाग)

अगस्त 2023 से प्रारंभ

प्रवेश प्रक्रिया शुरू

आयु सीमा - 10 से 18 वर्ष

योग्यता : 8 वीं पास

संपर्क करें : गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी
निकट सौ शैय्या अस्पताल, वृन्दावन